Bihar Board Class 11th Hindi Book Notes पद्य Chapter 16 सहजोबाई के पद

सहजोबाई पद कवि परिचय – (1725)

कवि परिचय-साहित्य में कोई भी प्रवृत्ति किसी भी काल में किसी न किसी अंश में जीवित रहती है। जैसे रीति काल के घोर विकास-वैभवपूर्ण वातावरण में भी भूषण वीरस के पुनः प्रस्तोता कवि हुए उसी तरह सहजोबाई भी निर्गुण संतमत की अलग जगाती दीखती हैं।

"हरिप्रसाद की सुता नाम है सहजोबाई।
दूसर कुल में सदा गुरु चरन सहाई।"

की एक मात्र स्वीकारोक्ति के अनसार इनके पिता का नाम हरिप्रसाद भार्गव था। प्रसिद्ध संत कवि चरणदास की ये शिष्या बन आजीवन ब्रह्मचारिणी बन इन्हीं की सेवा में रहीं।

इनके चिन्तन में कुछ चीजें ऐसी हैं जो अन्य संत कवियों से इन्हें अलग करती हैं। निर्गुण ज्ञानाश्रयी भक्तिधारा की होकर भी कृष्ण के प्रति जो इनका रागानुरक्ति है वह इन्हें मीरा की तरह प्रस्तुत करती है और गुरु के प्रति जो इनका उद्गार है वह इन्हें कबीर की कोटि में पहुंचा देता प्रस्तुत करती है और ना होकर भी कृष्ण के प्रति जात कवियों से इन्हें अलग सहजों के व्यक्तित्व और काव्य में अटूट गुरुभक्ति सहज ध्यानाकृष्ट करती है। वे ईश्वर से कहीं अधिक महत्त्व अपने गुरु को देती हुई कहती हैं-

राम तजूं पै गुरु न बिसारूं। गुरु के सम हर कूँ न निहारूँ।।
चरणदास पर तन मन वारूं। गुरु न तजूं हरिः तजि डारूँ।।

सहजोबाई ने अपना सम्पूर्ण जीवन गुरुचरण दास और उनसे प्राप्त ईश्वरी अनुराग को समर्पित कर दिया। जैसा कि आचार्य शुक्ल का कथन है- ब्रह्म के स्वरूप में भावुक भक्त ध्यान या भाव-मग्नता के समय अपनी सारी सत्ता को हृदय प्राण, बुद्धि, कल्पना, संकल्प इत्यादि सारी वृत्तियों को समाहित और घनीभूत करके बड़े वेग के साथ लीन कर देता है। भावुक भक्त की एकांत अनुभूति प्रत्यक्ष दर्शन के ही तुल्य होती है। सहजोबाई ने कृष्ण के स्वरूप को निर्गुण ज्ञानमार्गी का चोल उतार कर जिस सहज और प्रकृत रूप में प्रस्तुत किया है, उसे विस्मृत करना कठिन है

"मुकुट लटक अटकी मन माहीं।
नृत तन नटवर मदन मनोहर कुडल झलक अलक बिथुराई।"

सहजोबाई की रचनाओं में इनकी प्रगाढ़ गृरुभक्ति, संसार की ओर से पूर्ण विरक्ति तथा साधु, मानव-जीवन, प्रेम, निर्गुण सगुण भेद, नाम स्मरण जैसे परंपरित विषय ही हैं। विषय पुराने हैं उद्भावनाएं ये बहुत मार्मिक नहीं हैं कहीं-कहीं, भाव विह्वलता के निदर्शन अवश्य हो जाते हैं

"बबा काया नगर बसावौ।
ज्ञान दृष्टि से सैं घट में देखौं, सूरति निरति लौ लौवौ।
पाँच मारि मन बस करि अपने तीनों ताप नसावौ।

सत संतोष गहौ दृढ़ सेती दुर्जन मारि भजावौ।
सील, छिमा धीरज धारौ, अनहद बंब बजावौ।
पाप बनिया रहन न दीजै, धरम बजार लगावौ।।
सुबस बास होवै तब नगरी, बैरी रहै न कोई।
चम्न दास गह अमल बतायो, सहजो संभान्न सोई।।

सहजोबाई ने अपनी रचनाओं में सांसारिकता से विराग, नामजप तथा निर्गुण-सगुण ब्रह्म अभेद भाव की अभिव्यंजना की है। सहजोबाई में जो भक्ति है वह ज्ञान आधारित है लेकिन उसका प्रकटीकरण अविचल संकल्प और समर्पण की स्पृहणीय शक्ति के रूप में हुआ है।

मीरा के बाद सहजोबाई ही हमारे सामने आती हैं जो नारी होकर भी अपने अस्तित्व और सतीत्व दोनों बिन्दुओं पर मुखर हैं। उस जमाने में कुँवारी और ब्रह्मचारिणी बनकर गुरु की सेवा में समर्पित हो जाना एक कठोर कार्य था!

इन्होंने दोहे, चौपाई और कुंडलियाँ छंद में अपनी रचनाएँ की हैं। इनकी एकमात्र उपलब्ध रचना "सहज प्रकाश" है।

पदों का भावार्थ।

सहजोबाई के प्रथम पद

रीतिकाल के घोर श्रृंगारिक वातावरण में निर्गुण ज्ञानमार्गी भक्ति की अलख जगानेवाली सहजोबाई, कृष्ण के स्वरूप पर इस तरह से मुग्ध हुई कि निर्गुण का पद-पाठ भूल कर कृष्ण सौन्दर्य का वर्णन कर बैठी। इनके अनुसार शिशु कृष्ण के माथे पर जो मुकुट है उसमें झालर हैं, फुदने के उनके हिलने-डुलने से गजब का सौन्दर्य वर्द्धन होता है। सहजो का मन चित्त उसी लटकन में अटक कर रह गया है। छोटे कृष्ण अपने छोटे पैरों के बल नाचने में व्यस्त हैं और इस क्रम में उनके कानों के कुण्डल श्यामल धुंघराले बालों को तितर-बितर करते हुए बार-बार झलक मारते हैं और श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को और वर्धित करते हैं।

उनकी नाक में मुक्ता जड़ित बुलाक है जो होठों के हिलने पर हिलता
है। कृष्ण की भौंहे भी कमान सी हैं जिनके गतिशील होने से इनका
स्वरूप और प्रभविष्णु हो उठता है। धरती पर तो थाह-थाह कर ठुमक-
ठुमक कर चलते हैं किन्तु अपनी बांहें उठाकर पलक झपकते कोई-न-कोई बाल सुलभ चपलता कर बैठते हैं। इनकी चतुराई भी बड़ी मोहक है। जब इन्हें ताता-थैया की लय पर नाचने के लिए कहा जाता है तो इनके पैरों में बंधी पायल के नुपूर झंकृत हो उठते हैं। पहले ये दुलार, मनुहार पर रीझते हैं और फिर आनन्द में डूबकर हम सबको रिझाते हैं।

सहजोबाई अपने गुरु चरणदास की कृपा से यह लीला देखने में सफल हुई है। कृष्ण का यह स्वरूप हृदय को भवन बनाकर सदा सर्वदा के लिए बसाने योग्य है। वह कृष्ण से प्रार्थना करती है कि इसी विश्व मोहन स्वरूप में वे उसके हृदयरूपी भवन में सदा के लिए बस जाएँ।

प्रस्तुत घद में वात्सल्य रस का वर्णन हुआ है। अनुप्रास, वीप्सा, उपमा आदि अलंकारों का सुन्दर विनियोग प्राप्त होता है।

इस पद के वर्णन से सहजोबाई के भीतर सगुण-निर्गुण भक्ति का जो अन्तर्विरोध है उसका एक तरह से निरसन हुआ है। यह उनकी निर्गुण भक्ति की उच्छल आनन्दानुभूति का ही प्रकट रूप है।

https://www.evidyarthi.in/

सहजोबाई के द्वितीय पद

ज्ञानी, संत, निर्गुणपंथी सहजोबाई अपने गुरु (श्रीचरणदास) और परमब्रह्म राम के बीच प्राथमिकता के प्रश्न पर गुरु के साथ हैं। उनके मत से ब्रह्म राम की उपलब्धि हो जाने के बाद भी गुरु का महत्त्व अक्षुण्ण है। यदि कोई अब उनसे गुरु को छोड़ने, विस्मृत करने को कहेगा तो मै उपलब्ध राम (ब्रह्म) को ही तजना, त्यागना श्रेयष्कर समझूगी। गुरु यदि मेरे सामने हैं तो उनके रहते मैं राम को देखन भी नहीं चाहूँगी।

यह सही है कि हरि की कृपा से मेरा संसार में जन्म हुआ है। लेकिन ईश्वर तो चौरासी। लाख योनियों में असंख्या जीवों को प्रतिदिन जन्म देते हैं और मृत्यु के द्वारा उसे अपने पास बुला लेते हैं। लेकिन यह कृपा गुरु की ही है जिससे आवागमन से, जेन्म-मरण के चक्र से मुझे (जीव को) मुक्ति मिल गयी है। ईश्वर ने न सिर्फ हमें पैदा किया बल्कि चलते समय पाँचा चोर भी मेरे साथ लगा दिये। ये हैं-काम, क्रोध, मोह, मद और मत्सर।

जो कुछ भी कमायी होती, पुण्यार्जन होता, ये चोर चुरा लेते थे। मै इनके रहते अनाथ थी। गुरु ने इन चोरों (दुर्गुणों) से मुक्त कराया। हरि ने पैदा होने के लिए एक परिवार रूपी कारा में भेज दिया। जहाँ माया-ममता की बहुस्तरीय बेड़ियों ने मुझे जकड़ लिया। गुरु ने इन बेड़ियों को काटकर मुझे मुक्त किया। यही नहीं, ईश्वर ने जन्म देकर रोग और भोग में, सुख और दुःख में उलझा दिया। सांसारिक आकर्षण भोग के लिए प्रवृत्त करते और भोगोपरान्त अनेक रोग झेलने पड़ते थे। योगी गुरु ने योग के द्वारा रोग और भोग दोनों से मुक्त कराया। ईश्वर ने अनेक तरह के कर्म के मकड़जाल में उलझा दिया।

मै वास्तव में क्या हूँ, इसका स्मरण ही भूल गया। गुरु ने मुझे आत्म रूप का दर्शन कराया। ईश्वर ने मेरे साथ धोखा किया। मेरा निजत्व उसने मुझसे ही छिपा लिया, जिसे गुरु ने अपने ज्ञान के दीपक की लौ में मुझे दिख दिया। ईश्वर ने मुझे फिर भरमाने की चेष्टा की कि बंधन में ही, पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन में ही जीव की मुक्ति है। किन्तु मेरे गुरु ने ईश्वर के इस तिलस्म को भी मिटा डाला। अत: जिन गुरु चरणदास ने मेरा कायाकल्प किया उन पर मै स्वयं को तन-मन से न्योछावर करती हूँ। गुरु को किसी भी परिस्थिति में नहीं तज सकती भले ही हरि को तजना पड़ जाए तो उसे छोड़ने के लिए मै सर्वदा तैयार हूँ। मेरी गति राम में ही, गुरु में लीन होने में ही है।

प्रस्तुत पद में सहजोबाई ने परमपिता जगत् नियामक के अवगुणों का वर्णन किया है। ऐसा दुः साहस आज तक शायद ही किसी कवि ने किया हो। ईश्वर ने जन्म देकर भटकने के लिए बाध्य कर दिया, अपने इंगित पर नाचने के लिए बाध्य कर दिया किन्तु गुरु ने ईश्वर के विधान को ही मेरे लिए उलट-पुलट कर रख दिया।

स्वाभाविक रूप से अनुप्रास अलंकार यत्र-तत्र उपलब्ध है। शांत रस का यह पद अपूर्व प्रभाव क्षमता से सम्पन्न है।

सहजोबाई के पद कठिन शब्दों का अर्थ

नृत-नृत्य। भवनकारी-हृदय की भवन बनाकर रहने वाले। नटवर-लीलाधारी कृष्ण। सदाई-सदा ही, सर्वदा, हमेशा। अलक-केश, लट। बिसाऊँ-भूलूँ। बिथुराई-बिखरा हुआ। माही-में। बुलाक-नाक का आभूषण जाल में डोरी-जाल में डालना। हलत-हिलना। बेरी-बेड़ी, जंजीर। मुक्ताहल-मोती। लखादौ-दिखाया। नूपूर-धुंघरू। आप छिपायौ-आत्मरूप। छिया-दिया। रीझ-मोहित। तजि डारूँ-छोड़ दूं। धनरि (धरणी)-धरती। मोरूँ-मुझसे। हिय-हृदय।

सहजोबाई के पद काव्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

1. मुकुट लटक अटकी .....बिथुराई।
व्याख्या-
सहजोबाई ने प्रस्तुत पंक्तियों में सगुण रूप ईश्वर श्री कृष्ण के सौंदर्य का वर्णन किया है। उनके अनुसार कृष्ण के माथे का शोभाशाली मुकुट और उसमें लगे लटकन मेरे मन में अटक गये हैं। अर्थात् मेरा मन कृष्ण के सौंदर्य पर रीझ गया है। उनका शरीर नृत्य कर रहा है। चंचल स्वभाव के कारण हर समय गतिशील लगता है जो अपनी लयात्मकता के कारण नृत्य करता हुआ प्रतीत होता है। ऐसे नटवर श्री कृष्ण का मर्दन अर्थात् कामदेव के समान मनोहर रूप मन को मुग्ध कर लेता है। उनके कानों में पड़ा कुंडल डोलने पर कौधता है और छितरायी, हुई केश-राशि की शोभा मन को मुग्ध कर देती है।

2. नाक बुलाक हलत ..... करत चतुराई।।
व्याख्या-
सहजोबाई ने प्रस्तुत पंक्तियों में नटवर श्री कृष्ण की आंगिक शोभा का
वर्णन किया है। इसमें नाक में धारण किये गये बुलाक का वर्णन है जिसमें मुक्ताहल अर्थात् मोती जड़े हुए हैं। उनके मनोरम ओठ विशिष्ट सुन्दर ढंग से मटकते हैं और भौंहो की भौगमा सौन्दर्य की छवि बिखेरती है। वे ठुमुक-ठुमक कर धरती पर पैर रखते है अर्थात् चलते हैं और हाथों को उठा-उठाकर विभिन्न मुद्राओं के द्वारा भाव-चातुर्य व्यक्त करते हैं। अर्थात् उनके हस्त-परिचालन के माध्यम से विविध भावों की भी अभिव्यक्ति होती है वह कोरा हस्तपरिचालन नहीं होता है। यहाँ कवयित्री ने कृष्ण के आभूषण तथा उनके औठ, भौंह, पग, हाथ आदि की गति मुद्रा का सजीव चित्र खींचा है।

3. झुनुक झुनुक नूपूर झनकारत ..... रहौ सदाई।
व्याख्या-
श्री कृष्ण चलते हैं तो पैरों के नूपुर बजते हैं। इससे उनके बाल-मन को आनन्द आता है, अतः वे जान-बूझकर नूपूर को झनकारते चलते हैं। इससे वातावरण में लयबद्ध झनकार उत्पन्न होती है। यह सुनने वालों का मन मोह लेता है। इतना ही नहीं कृष्ण ताता थेई की मुद्रा में नाचते भी हैं और उनका नृत्य मन को मोह लेता है। इतना ही नहीं कृष्ण ताता थेई की मुद्रा में नाचते भी है और उनका नृत्य मन को मोह लेता है। सहजोबाई कहती हैं कि मै तुम्हारे चरणों की दासी हूँ, तुम मेरे हृदय में निवास करो और सदा मुझ पर कृपा रखो। इन पंक्तियों में 'चरणदास' शब्द का दो अर्थो में प्रयोग हुआ है। प्रथम चरणों का दास और द्वितीय सहजोबाई के गुरु चरणदास। अतः यहाँ श्लेष अलंकार है।

4. राम तनँ पै गुरु न बिसारूँ ..... आवागमन छुटाहीं।
व्याख्या-
सहजोबाई ने प्रस्तुत पंक्तियों में अपनी यह प्रतिज्ञा व्यक्त की है कि वह राम को छोड़ सकती हैं मगर गुरु को नहीं। इसका कारण बतलाती हुई कहती है कि हरि ने जन्म देकर संसार में भेज दिया। मै यहाँ जीवन-धारण करने की सारी व्यथा, सारा प्रपंच और सारा विकार झेल रही हूँ। मगर गुरु ने ज्ञान देकर इस आवागमन अर्थात् जन्म लेने और मरने के क्रम से छुटकारा दिला दिया है। इसीलिए मैं गुरु के समान हरि को नहीं मानती हूँ। अर्थात् गुरु हरि से श्रेष्ठ हैं। हाँ 'राम' शब्द का प्रयोग ईश्वर के लिए हुआ है दशरथसुत के अर्थ में नहीं।

5. हरि ने पाँच चोर दिये साथा ..... काटी ममता बेरी।
व्याख्या-
प्रस्तुत पंक्तियों में सहजोबाई कहती है कि हरि ने हमारे साथ कोई
उपकारा नहीं किया है। उलटे कई समस्याएँ साथ लगा दी हैं। इन पंक्तियों के अनुसार गुरु ने पाँच चोरो से मुक्ति दिलाने का कार्य किया है। अर्थात् उनके उपेदश में इन्द्रियों के प्रति आसक्ति घटाने में सहायता मिली है। इसी तरह

https://www.evidyarthi.in/

हरि ने 'सूत-वि:-नारी भवन परिवारा' के कुटुम्ब-जाल में फंसा दिया है, उलझा दिया है ताकि ईश्वर की ओर उन्मुख होने का अवसर ही न मिले। यहाँ गुरु ने ममता की डोर काटकर इस कुटुम्ब जाल से मुक्त होने में मदद की है। अत: ईश्वर सांसारिकता और आसवित में फैलाकर अपने से दूर करता है जबकि गुरु मोहपाश काटकर ईश्वर के समीप पहुँचाता है। अतः गुरु ईश्वर से श्रेष्ठ है।

6. 'हरि ने रोग भोग उरझायौ ..... आंतम रूप लखायौ।'
व्याख्या-
प्रस्तुत पंक्तियों में सहजोबाई हरि और गुरु का अन्तर स्पष्ट करती हुई कहती है कि हरि ने जीवन तो दिया लेकिन रोग और भोग में उलझा दिया। इससे जीवन कठिन और जटिल हो गया। इसके विपरीत गुरु ने योग की शिक्षा देकर मुक्ति दिलाई। योग के विषय में कहा गया है कि कर्म-कौशल और चित्तवृत्ति के निरोध के उपाय नाम योग है। इन दोनों अर्थात् कौशल और चित्त निरोध से जीवन संयमशील बनता है और तब स्वभावतः रोगमुक्त हो जाता है। इसी तरह हरि ने कर्म मार्ग पर डालकर कर्मफल की अनिवार्यता बतलाई जिससे कर्म का दुनिया में भटक गया। गुरु ने आत्मरूप का ज्ञान देकर बताया है कि अपने भीतर देखने पर आत्मज्ञान पाने से ही कर्म फल और कर्म-बन्धन से मुक्ति मिलती है। इस गुरु योग और आत्मज्ञान देता है जबकि ईश्वर कर्म भोग और रोग। अत: गुरु ही श्रेष्ठ हैं।

7. हरि ने मोसं आप छिपायौ ..... हरि . तजि डारूँ।
व्याख्या-
चौपाई छन्द में रचित प्रस्तुत पंक्तियों में सहजोबाई कहती हैं कि पंच ज्ञानेन्द्रिया, भोग, रोग, कर्म परिवार, धन आदि सांसारिक आकर्षण के अनेक प्रपंचो के द्वारा ईश्वर ने एक परदा जैसा हमारे और अपने बीच डाल दिया और अपने को छिपया, ताकि हम उसे प्राप्त नहीं कर सकें। सहजो की दृष्टि में उपयुक्त तत्त्व अंधकार के परदे की तरह थे जिसके कारण हम ईश्वर को देखने में असमर्थ रहे। तब गुरु ने ज्ञान का दीपक जलाकर इस अन्धकार को दुर कर दिया और ईश्वर के दर्शन करा दिया फिर हरि से जोड़कर हमारे लिए मुक्ति रूपी गति ले आये।

इस प्रकार गुरु ने ईश्वर द्वारा फैलाए सारे प्रपचों को मिटा दिया जिससे
हमारा अज्ञानजनित भ्रम दूर हो गया। मै अपने गुरु. चरणदास पर तन-
मन न्योछावर करती हूँ। मै ऐसा ज्ञान देने वाले गुरु को नहीं तनँगी,
अकर ईश्वर और गुरु में से किसी एक को छोड़ना होगा तो ईश्वर को ही छोडूंगी। सहजोबाई के इस कथन का अभिप्राय यह है कि गुरु की कृपा से ईश्वर मिल जाता है लेकिन ईश्वर की कृपा से गुरु नहीं। यदि ईश्वर को छोड़ भी दूंगी तो उनकी कृपा से पुनः प्राप्त कर लूँगी, कवयित्री ने चरण की दासी और गुरु चरणदास-इन दो अर्थो में 'चरणदास' शब्द का प्रयोग किया है अतः इसमें श्लेष अलंकार है।